17 दिसम्बर 2006, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

अरहंत और सिद्ध भगवान निर्मल है और त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा अमल है।

ह्न बिन्दु में सिन्धु, पृष्ठ-21

वर्ष : 29, अंक : 18 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

दिसम्बर (द्वितीय), 06 प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

'ध्रुवधाम' में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न

बांसवाड़ा (राज.) : यहाँ श्री ज्ञायक पारमार्थिक ट्रस्ट (रजि.) द्वारा संस्थापित नवनिर्मित रत्नत्रय तीर्थ 'ध्रुवधाम' में श्री पंचबालयति दिग. जिनमन्दिर, श्री समवशरण जिनमंदिर एवं भगवान महावीरस्वामी मानस्तंभ हेतु दिनांक ३० नवम्बर से ०६ दिसम्बर, २००६ तक श्री नेमिनाथ दिग. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव अनेक मांगलिक कार्यक्रमों पूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में देश-विदेश के ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा पर प्रासंगिक प्रवचनों के अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर आदि के प्रवचनों का लाभ मिला।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद द्वारा सह-प्रतिष्ठाचार्य ब्र.धन्यकुमारजी बेलोकर, पण्डित मधुकरजी जलगाँव, पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित संदीपजी शास्त्री छतरपुर, पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित सुकुमालजी झांझरी उज्जैन, पण्डित बाबूलालजी बांझल गुना आदि के सहयोग से सम्पन्न हुई।

महोत्सव में नेमिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती निर्मला व श्रीमहीपालजी ज्ञायक बांसवाड़ा को प्राप्त हुआ। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री धनपाल व श्रीमती कैलाश ज्ञायक थे। कुबेर इन्द्र-इन्द्राणी श्री वीरेन्द्र व श्रीमती सीमा ज्ञायक थे। सम्पूर्ण महोत्सव यज्ञनायक श्री नरेश एस.-किरण जैन के करकमलों से सम्पन्न हुआ।

राजुल के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती जैनमती व श्री सुभाषचन्द जैन दिल्ली को मिला।

दिनांक १६ नवम्बर को प्रतिष्ठा महोत्सव का ध्वजारोहण श्री गम्भीरमल प्रकाशचन्दजी मानावत अहमदाबाद द्वारा किया गया। शौरिपुर के सिंह द्वार व मण्डल विधान का उद्घाटन श्री कीर्तिभाई चिमनलाल मेहता अहमदाबाद, प्रतिष्ठा मण्डप का उद्घाटन श्री माणकलाल रविन्द्रकुमार पंकजकुमार ठाकुर्डिया परिवार तथा प्रतिष्ठा मंच का उद्घाटन श्री दोसी अशोककुमारजी नथमलजी कलिंजरा के करकमलों से किया गया।

रात्रि में इन्द्रसभा/राजसभा के अतिरिक्त आचार्य अकलंक देव जैन न्याय महाविद्यालय के छात्रों तथा ज्ञान महिला मण्डल दाहोद द्वारा विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का मंचन किया गया।

इसके अतिरिक्त श्री कुन्दकुन्द-कहान स्वाधाय भवन का उद्घाटन श्रीमती भारती बेन आर. कोठारी एवं श्री पूनमचन्दजी लुहाड़िया द्वारा, महावीरस्वामी जिनालय का उद्घाटन श्री अनंतभाई ए.सेठ मुम्बई, महावीरस्वामी वेदी का उद्घाटन श्री निहालचन्दजी घेवरचन्दजी ओसवाल जयपुर तथा समवशरण वेदी का उद्घाटन श्रीमती वसुमतीबेन प्रकाशचन्द बखारिया मुम्बई के करकमलों से हुआ।

(शेष पृष्ठ 4 पर ....)

रोम-रोम से झलक रहा है

डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित **समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधिनी टीका** को पढ़कर **श्री प्रकाशचन्द्रजी जैन, सम्पादक : झरता करुणा स्त्रोत, नई दिल्ली** लिखते हैं ह्न

सौभाग्य से मुझे डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की नवीनतम कृति समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधिनी टीका की एक प्रति ऐसे समय में मिली, जब मुझे इसकी अत्यधिक आवश्यकता थी। इससे पूर्व मुझे डॉ. भारिल्ल की अन्य कृतियाँ 'समयसार अनुशीलन' (भाग 1 से 5, कुल पृष्ठ संख्या 2,223) एवं 'समयसार का सार' (पृष्ठ संख्या 398) पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हो चुका है। आदरणीय डॉ. साहब की 'समयसार का सार' शीर्षक से तैयार 25 कैसिटों के सेट को भी मैं अनेक बार सुन चुका हूँ। भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली से प्रकाशित डॉ. ए.एन.उपाध्ये कृत अंग्रेजी अनुवाद एवं परमपूज्य गणिनी प्रमुख 105 श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित समयसार की टीका भी पढ़ चुका हूँ।

वास्तव में डॉ. साहब की उक्त नवीनतम कृति **ज्ञायकभावप्रबोधिनी** हिन्दी टीका में आत्मख्याति एवं तात्पर्यवृत्ति टीकाओं का भरपूर उपयोग किया गया है, जिससे समयसार जैसे महान परमागम में वर्णित गूढ़ विषय-वस्तु को कम पढ़ा-लिखा साधारण मुमुक्षु भी सुगमता से हृदयंगम कर सके, इसका विशेष ध्यान रखा गया है। **(शेष पृष्ठ 4 पर ....)**

सम्पादकीय -

ये तो सोचा ही नहीं

(गतांक से आगे...) - रतनचन्द भारिल्ल

१८. आर्तध्यान के विविध रूप

पवित्र उद्देश्य, नि:स्वार्थ भाव और निश्छल मन से निकली पुण्यात्मा की आवाज सरलस्वभावी सजग श्रोताओं के मन को छुए बिना नहीं रहती।

ज्ञानेश ने जब अपने प्रवचन में आर्तध्यान के दुखद फल का सशक्त भाषा में वैराग्यवर्द्धक चित्रण प्रस्तुत किया तो अनेक लोगों की तो आँखें भर आईं। स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि श्रोताओं ने ज्ञानेश के मार्गदर्शन का अक्षरश: पालन करने का संकल्प कर लिया। सबसे अधिक धनेश, धनश्री, मोहन और रूपश्री प्रभावित हुए; क्योंकि ज्ञानेश के प्रवचन ने सबसे अधिक इन्हीं लोगों की दुखती रग को छुआ था, इन्हीं के हृदय पर गुजर रही स्थिति को उजागर किया था। इन्हें ऐसा लग रहा था कि मानो ज्ञानेश ने इनके हृदय मे बैठकर इनके मनोभावों का ही चित्रण किया हो।

मोहन सोच रहा था ह्न यह इष्ट वियोगज, अनिष्ट संयोजक नाम आर्तध्यान ऐसा राजरोग है, जो थोड़ा-बहुत तो सभी को होता है; पर हम जैसे अधर्मी और अज्ञानियों को तो यह बहुत बड़ा अभिशाप है, इससे कैसे बचा जाये ?

धनश्री तो अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान की साक्षात् मूर्ति ही है। उसका अब तक का संपूर्ण जीवन इसी आर्तध्यान में बीता है। पिता मोहन के दुर्व्यसनी होने के कारण उसका बचपन जिन प्रतिकूल परिस्थितियों में बीता, जो-जो यातनायें उसे उन प्रतिकूल प्रसंगों में भोगनी पड़ीं, उन सबको चित्रित करता हुआ ज्ञानेश का प्रवचन सुनकर उसकी आँखों के सामने वे सब दृश्य चलचित्र की भाँति आने-जाने लगे। उस समय धनश्री यह सोच रही थी कि ह्न 'हाय ! इन भावों का फल क्या होगा ? इनसे छुटकारा कैसे मिले ?'

भरे यौवन में धनेश जैसे पियक्कड़ पति को पाकर जिन अनिष्ट संयोगों के निमित्त से होने वाले आर्तध्यान के दुष्चक्र में वह फंस गई थी; वे दृश्य भी उसकी दृष्टिपथ से गुजरे बिना नहीं रहे। वह रात भर बिस्तर पर पड़ी-पड़ी अनिष्ट की आशंका से इतनी घबरा गई कि उसकी नींद ही गायब हो गई।

रूपश्री इष्ट वियोगज आर्तध्यान का मूर्तरूप थी। उसका तो अबतक का पूरे जीवन का हाल ही बेहाल रहा। ज्ञानेश के प्रवचन से उसके स्मृति-पटल पर वे सभी दु:खद दृश्य उभर आये। इन्हीं इष्टवियोग की परिकल्पनाओं से उसका बचपन बीता था और यौवन की सुखद कल्पनायें भी आकस्मिक हुई दुर्घटना से अनायास ही धूल में मिल गईं। उसके जीवन में घटित हुए वे एक-एक दृश्य उसकी आँखों के आगे भी आने-जाने लगे होंगे।

धनेश दुर्व्यसनों के कारण राज-रोगों से ऐसा घिर गया था कि दिन-रात पीड़ा से कराहता रहता। अब तो पीड़ा की कल्पना मात्र से चीखने-चिल्लाने लगता है। कल के प्रवचन में जब पीड़ा चिंतन आर्तध्यान के दु:खद दुष्परिणामों का चित्रण हुआ तो धनेश की दशा और भी अधिक खराब हो गई। वह तो गिड़-गिड़ा कर वहीं ज्ञानेश के चरणों से लिपट गया और उससे कहने लगा ह्न 'इससे बचने का उपाय बताइए। आप जो कहेंगे, मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ।'

इसीतरह मोहन का अब तक सारा समय निदान नामक आर्तध्यान में ही बीता था। ज्ञानेश के प्रवचनों से उसे भी अपनी इस भूल का पूरा-पूरा अहसास हो गया। उसकी आँखों के सामने भी वे सब दृश्य स्पष्ट झलकने लगे, जिनमें उसने लौकिक कामनाओं से अपने धन-वैभव के अर्जन, संरक्षण एवं उसके उपभोग हेतु देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पशु बलि जैसे क्रूर कर्म करने के नाना प्रयास किए थे, मिन्नते माँगी थीं। उसे महसूश हो रहा था कि उसकी वे धार्मिक क्रियाएँ सकाम होने से, निष्काम न होने से निदान आर्तध्यान ही थीं। उनमें धर्म किंचित् भी नहीं था।

अधिकांश व्यक्ति अपनी समस्त शक्ति और समय मनुष्य पर्याय को सुखी और समृद्ध बनाने में ही झोंक देते हैं, यद्यपि वे जानते हैं कि हम जन्म के पहले भी थे और मरने के बाद भी अपनी-अपनी करनी के अनुसार 84 लाख योनियाँ ही कहीं न कहीं रहेंगे; फिर भी यह नहीं सोचते कि यही जन्म सब कुछ नहीं है, अगले जन्म के लिए भी कुछ ऐसा करें ताकि कीड़े-मकोड़ों की योनि में न जाना पड़े। उन्हें नहीं मालूम कि लौकिक कामनाओं से किए गए पूजा-पाठ, जप-तप आदि सब निदान आर्तध्यान की कोटि में ही आते हैं।

ज्ञानेश के कल के प्रवचन में यह बात बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट हो गई थी।

गीता के निष्काम कर्म करने के उल्लेख के साथ प्रवचन में तो यहभी आया था कि ''धर्म के स्वरूप से अनभिज्ञ अज्ञानी की समस्त शुभाशुभ-भावनाएँ आर्तध्यान में ही मानी जावेंगी; क्योंकि मिथ्या मान्यता में धर्मध्यान तो होता ही नहीं है और ध्यान के बिना कोई रहता नहीं है; अत: अज्ञानी का शुभाशुभभाव निदान नामक आर्तध्यान ही है।''

इसीप्रकार और भी सभी श्रोता ऐसा ही महसूश कर रहे थे कि हमें भी आर्तध्यान ही हो रहा है। ज्ञानेश के प्रवचनों से प्रेरणा लेकर जिसने भी अपने अंदर झांक कर देखा तो सभी को ऐसा लगा मानो वे हमारे हृदय की बात ही कह रहे हों। सभी को अपनी-अपनी भूल का अहसास हो रहा था, अपने भावों की, परिणामों की पापमय परिणति स्पष्ट दिखाई दे रही थी।

ज्ञानेश ने अपने प्रवचन में कहा ह्न ''यदि इस आर्तध्यान से बचना है, धर्म ध्यान की भावना है तो उसके लिए तो पुण्य-पाप आदि का एवं आत्मा-परमात्मा का यथार्थ ज्ञान करना ही होगा।

निश्चय धर्मध्यान ज्ञानचेतना की वह अवस्था है, जहाँ समस्त शुभ

विकल्प भी अस्त होकर एक आत्मानुभूति ही रह जाती है, विचार श्रृंखला रुक जाती है, चित्त की चंचलवृत्ति निश्चल हो जाती है, अखण्ड आत्मानुभूति में एकमात्र शुद्धात्मा का ही ध्यान रहता है।

इसप्रकार विचारों को आत्मकेन्द्रित किया जाना धर्मध्यान है। मुख्यत: विश्व की कारण–कार्य व्यवस्था, वस्तुस्वातंत्र्य जैसे सिद्धान्तों के सहारे अकर्तृत्व की भावना को दृढ़ करते हुए संसार, शरीर और भोगों से विरक्त करनेवाली चिन्तनधारा के माध्यम से जगत की क्षणभंगुरता को जानकर, जगत से उदास होने पर ही चंचल चित्तवृत्ति नियंत्रित की जा सकती है। इसी प्रक्रिया का नाम धर्मध्यान है।

जबतक पर–पदार्थों और अन्य जीवों में किसी भी प्रकार से परिवर्तन करने की अनधिकार चेष्टा रहेगी, तबतक मन की वृत्ति/प्रवृत्ति पर नियंत्रण संभव नहीं होगा।

हाँ, जब तक इस दिशा में पुरुषार्थ जाग्रत नहीं हो, तब तक ऐसे आत्म–सन्मुख पुरुषार्थ की पात्रता प्राप्त करने के लिए लौकिक सज्जनता, आजीविका के साधनों की शुद्धि और आहार–विहार में अहिंसक आचरण की भावना हो; क्योंकि ये ही धर्म का मूल स्रोत है।''

इसप्रकार ज्ञानेश के प्रभावशाली प्रवचनों को सुनकर सभी श्रोता अपने को धन्य अनुभव कर रहे थे।

१९. बहुत सा पाप, पाप सा ही नहीं लगता

''हमने कभी सोचा भी नहीं होगा, वस्तुत: सामान्यरूप से कोई सोच भी नहीं सकता कि प्रतिदिन प्रात: आँखे खोलते ही हम जो न्यूज पेपर पढ़ने से अपनी दिनचर्या प्रारम्भ करते हैं, उसमें भी राग–द्वेष एवं हर्ष–विषाद होने से पापों का बन्ध होता है। पर वास्तविकता यह है कि हमारे प्रभात का प्रारम्भ ह्न ऐसे ही अप्रयोजनभूत पाप भावों से होता है, जिनसे हमारे किसी लौकिक प्रयोजन की भी पूर्ति नहीं होती।

सामान्य जनमानस को बड़े–बड़े नेताओं के पारस्परिक संघर्ष से क्या लेना–देना है ? उन्हें क्या उपलब्धि होनेवाली है नेताओं की गतिविधियाँ जानने से?

अत: वे सोचते हैं ह्न हम हर्ष–विषाद कर पाप–कर्म क्यों बाँधें ?

इसप्रकार यदि थोड़ा भी विवेक से काम लें तो हम बहुत–से व्यर्थ के पापों से बच सकते हैं और अपने जीवन को मंगलमय बना सकते हैं।

विचार कीजिए ह्न बिस्तर छोड़ते ही सबसे पहले हमारे हाथों में समाचार–पत्र होता है; मुख्य समाचार पढ़ते ही हमारा मनमर्कट या तो हर्षित हो उछल–कूद करने लगता है या उदास होकर मुँह लटका लेता है, खेदखिन्न हो जाता है। उस समय मन में जो हर्ष–विषादरूप नानाप्रकार के संकल्प–विकल्प होते हैं, उनमें हर्ष के भाव रौद्रध्यान और विषाद के भाव आर्तध्यान की कोटि में आते हैं; जो कि पूर्णरूप से पापभाव हैं।''

इसप्रकार अपने दैनिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में रौद्रध्यान की चर्चा करते हुए ज्ञानेश ने आगे कहा ह्न ''हमें स्वयं का ही पता नहीं है कि हम कितने गहन अंधकार में हैं। बहुत सारे पापभाव तो हमें पाप से ही नहीं लगते। घर में सब परिजन–पुरजन जब एकसाथ बैठकर बड़े प्रेम से टी.वी. देखते हैं, पत्नी से प्रेमालाप करते हैं, बच्चों से बातें करते हुए उन्हें प्रसन्न देख–देख हम गौरवान्वित होते हैं और अपने घर–परिवार को आदर्श मानते हैं ; तब यदि धर्म की दृष्टि से उस वातावरण की समीक्षा करें और परिणामों की परीक्षा करें, भावों का विश्लेषण करें तो पता चलेगा कि ह्न क्या सचमुच उस समय हमें धर्म हो रहा है, पुण्यबंध हो रहा है या पापबंध हो रहा है ? निश्चित ही ये शुभ–अशुभ भाव होने से पुण्य एवं पाप परिणाम ही हैं और विषयानन्दी एवं परिग्रहानन्दी रौद्रध्यान के भाव होने से पाप भाव ही हैं।

जो हिंसा में आनन्द मानता है, असत्य बोलने में आनन्द मानता है, चोरी, विषयसेवन और परिग्रह संग्रह करने में आनन्द मानता है, इनमें ही जिसका चित्त लिप्त रहता है, रमा रहता है, वह सब पापभाव रूप रौद्रध्यान है।''

ध्यान रहे ह्न ''आर्तध्यान की प्रकृति दु:खरूप है और रौद्रध्यान की आनंदरूप है।

कहो भाई धनेश ! तुम्हारा ह्न 'खाओ–पिओ और मौज करो' वाला सिद्धान्त किस ध्यान की कोटि में आता है ?''

धनेश एकक्षण सोचकर बोला ह्न ''आपके कहे अनुसार तो ये परिणाम रौद्रध्यान रूप पापभाव ही हुए; क्योंकि खाओ–पिओ और मौज उड़ाओ वाली वृत्ति विषयों में आनन्द मानने रूप ही तो है।''

मुस्कराते हुए ज्ञानेश ने कहा ह्न ''वाह ! भाई वाह ! ! बात तो तुमने ध्यान से सुनी और समझी भी, इसके लिए तुम्हें धन्यवाद। भाई ! सारा जगत इन्हीं विषयों में और विषय–सामग्री के संग्रह करने में मगन है। किसी ने कभी यह सोचा ही नहीं कि हमारे इन परिणामों का फल क्या होगा ?

देखो भाई ! धर्म के अनुसार पुण्य–पाप व धर्म का मूल आधार तो अपना भला–बुरा अभिप्राय एवं सही–गलत मान्यतायें ही हैं। इसीलिए कहा है कि ह्न दूसरे के द्रव्य को छीन लेने या हड़प जाने का अभिप्राय, झूठ बोलने का अभिप्राय, दूसरों को मारने–पीटने व जान से मार डालने का अभिप्राय और यह सब करके खुश होना रौद्रध्यान ही है तथा छोटे–बड़े जीवों की विराधना में अनैतिक साधनों द्वारा परिग्रह के संग्रह में आनन्द मानना रौद्रध्यान है।

स्वयं या दूसरों के द्वारा किसी को पीड़ित किए जाने पर हर्षित होना एवं बदला लेने की भावना आदि भी रौद्रध्यान है।''

रौद्रध्यान की बाह्य पहचान बताते हुए ज्ञानेश ने कहा ह्न

'क्रूर होना, मनोरंजन हेतु शिकार आदि के लिए हथियार रखना एवं चलाने की कला में निपुण होना, हिंसा की कथा में रुचि लेना, टेढ़ीभौंह, विकृतमुखाकृति, क्रोधादि में पसीना आने लगना, शरीर काँपना आदि तथा मर्मभेदी कठोर वचन बोलना, तिरस्कार करना, बाँधना, धमकाना–डराना, ताड़ना, परस्त्री पर खोटी भावना से मर्यादा का उल्लंघन करना आदि रौद्रध्यान की बाह्य पहचान है। जो मुँह में तिनका रखने वाले भोले–भाले, दीन–हीन खरगोश एवं हिरणों जैसे मूक पशुओं को अपने हथियार का निशाना बनाकर प्रसन्न होते हैं; भालुओं, बन्दरों, सर्पों तथा तोतों, चिड़ियों आदि को बन्धन में डालकर अपना व दूसरों का मनोरंजन करते हुए उनसे आजीविका साधने की सोचते हैं; वे सब रौद्रध्यानी व्यक्ति हैं।' **(क्रमश:)**

(पृष्ठ–1 का शेष... ज्ञायकभाव प्रबोधिनी)

617 पृष्ठ की उक्त कृति को एक साथ पढ़ पाना किसी भी पाठक के लिए संभव नहीं है; अत: डॉ. साहब ने प्रत्येक अध्याय को प्रारंभ करने से पूर्व उसमें वर्णित समस्त विषय–वस्तु को पुन: दुहरा दिया है। जिससे साधारण पाठक को विषय की तारतम्यता बनाए रखने में बड़ी सहायता मिलती है। समयसार जैसे महान परमागम पर लिखित डॉ. साहब की उक्त सभी कृतियों को दृष्टिंगत करने से मुझे लगता है कि आपने परमपूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी द्वारा समयसार पर 19 बार जन सभा में व्यक्त किए गए भावों को सम्यक् प्रकार हृदयंगम किया है।

जिसप्रकार युग के आदि में पूज्य गणधरदेवों ने परमपूज्य तीर्थंकरों की दिव्यध्वनि को झेलकर उसे धर्मप्रेमी श्रावकगणों के कल्याण के लिए आगम के रूप में गुंथित किया है; उसीप्रकार आदरणीय डॉ. साहब ने भी पूज्य गुरुदेवश्री के भाव–भासन को अपने हृदय में गहराई से अंकित कर समस्त मुमुक्षु समाज को परोसने का अद्वितीय कार्य किया है। जिससे स्पष्ट है कि **समयसार आपके रोम–रोम से झलक रहा है।**

समस्त मुमुक्षु समाज पर डॉ. साहब का यह महान उपकार है। इन्हें (डॉ. साहब की कृतियों को) जितनी बार भी पढ़ा जाए, पाठक को हर बार नवीनता ही भासित होती है तथा भाव स्पष्ट से स्पष्टतर होता चला जाता है; अत: आत्मकल्याण के इच्छुक सभी आत्मार्थियों को समयसार के भाव को सुस्पष्ट अपने हृदय में उतारने हेतु डॉ. साहब की उक्त सभी बहुमूल्य कृतियों का बारम्बार स्वाध्याय करते रहना चाहिए।

एक सुझाव ह्न विगत कुछ वर्षों से डॉक्टर साहब प्रतिवर्ष लगभग ड़ेढ़–दो माह के लिए धर्मप्रचारार्थ विदेश यात्रा करते हैं, अत: वहाँ भी अध्यात्मप्रेमी मुमुक्षुओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। आज विदेश एवं भारत में अंग्रेजी जानने–समझने वालों की भारी संख्या विद्यमान है, अत: मेरा सुझाव है कि अंग्रेजी लेखकों का एक पैनल तैयार कर डॉ. साहब की इन सभी अमूल्य रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद करवाकर इन्हें प्रकाशित किया जाए। साथ ही इन्टरनेट पर भी उपलब्ध कराया जाए, जिससे भारत सहित विदेश में बसे लाखों अंग्रेजी भाषी मुमुक्षु जन समयसार के भाव को भली प्रकार समझकर अपना आत्मकल्याण कर सकें।

तथा विश्व में फैले अनेक जैन–अजैन शोधार्थियों के लिए भी यह अनुपम सौगात होगी। इससे जैन तत्त्व का अंग्रेजी भाषी जैन–जैनेतर समाज में प्रचार–प्रसार करने में बहुमूल्य योगदान मिलेगा। शुभकामनाओं सहित..

टिप्पणी ह्न डॉ. साहब की कृतियों के अंग्रेजी अनुवाद का कार्य प्रारम्भ हो चुका है; जो अमेरिका स्थित एक मुमुक्षु भाई कर रहे हैं। साथ ही कुछ कृतियों को इन्टरनेट पर भी उपलब्ध कराया जा चुका है, जिसे **WWW.JAINWORLD.COM** पर देखा जा सकता है।

दुर्लभ मनुष्यभव प्राप्त करके जो इन्द्रिय विषयों में रमता है, वह राख के लिये दिव्य अमूल्य रत्न को जलाता है।

ह्न कार्तिकेय अनुप्रेक्षा

(पृष्ठ–1 का शेष... पंचकल्याणक महोत्सव)

महोत्सव को आकर्षक बनाने हेतु सीमंधर संगीत सरिता छिन्दवाड़ा द्वारा प्रासंगिक गीतों का रसास्वादन कराया गया।

विद्वत्सम्मान ह्न महोत्सव के मध्य गर्भ कल्याणक के दिन डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा प्रतिवर्ष विद्वानों के सम्मान के क्रम में जैन दर्शन के प्रचार–प्रसार के क्षेत्र में किये गये विशिष्ट कार्यों के लिये **पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा** का सम्मान किया गया।

इस प्रसंग पर उन्हें प्रशस्ति, शॉल, श्रीफल एवं दस हजार रुपये की मानधन राशि से पुरस्कृत किया गया।

कार्यक्रम में ट्रस्ट के अध्यक्ष पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, श्री बसन्तभाई दोशी मुम्बई, श्री महीपालजी ज्ञायक बाँसवाड़ा, श्री बीनूभाई, श्री कान्तिभाई मोटाणी, श्री रमेशभाई मंगलजी मेहता, श्री राजेन्द्रजी बंसल अमलाई मंचासीन थे। कार्यक्रम का संचालन ट्रस्ट के महामंत्री पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, मुम्बई ने किया।

संस्थाओं का सम्मान ह्न दिनांक ४ दिसम्बर को दीक्षा कल्याणक के अवसर पर श्री ज्ञायक पारमार्थिक ट्रस्ट, बाँसवाड़ा द्वारा आध्यात्मिक सत्पुरुष गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा उद्घाटित तत्त्वज्ञान के प्रचार–प्रसार में राष्ट्रीयस्तर पर अपना अमूल्य योगदान देनेवाली मुमुक्षु समाज की प्रतिनिधि महत्त्वपूर्ण संस्थाओं का अभिनन्दन किया गया।

इस अवसर पर राजस्थान सरकार के गृहमंत्री माननीय श्री गुलाबचन्दजी कटारिया की गौरवमयी उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

प्रतिष्ठा महोत्सव में पूरे देश से हजारों मुमुक्षु भाई–बहिनों ने पधारकर धर्मलाभ लिया। इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से ८१ हजार ५२७ रुपये का सत्साहित्य एवं २१ हजार १२५ घण्टों के सी.डी व ऑडियो कैसिट्स घर–घर पहुँचे। ●

पाठकों के पत्र ..

1. शिवपुरी से श्री सुरेशचन्दजी जैन लिखते हैं कि – डॉ. भारिल्ल कृत ज्ञायकभाव प्रबोधिनी टीका पढ़ी। इस युग में समयसार ग्रन्थ की अद्भुत, अजोड, अनुपम 'टीका' का उदय हुआ है। सकल जीव समाज – इसे सुनकर, पढ़कर, समझकर मोक्षपथ पर आयें और इसी के सहारे मोक्षपथ पर चलें – ऐसी मंगल भावना है। इस उत्कृष्ट कार्य हेतु लेखक के साथ–साथ प्रकाशक को भी कोटि–कोटि धन्यवाद !

2. सिलचर (आसाम) से श्री सुरेशचन्द जैन लिखते हैं – डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया द्वारा लिखित 'विचार के पत्र विकार के नाम' नामक कृति में लेखिका ने अपने सारे पत्रों के द्वारा जैनधर्म का सार बतलाया है। मैंने पूरी पुस्तक तीन घण्टे में पढ़ ली, फिर भी मन को तसल्ली नहीं हुई। मन बारम्बार उक्त कृति को पढ़ने के लिये लालायित होता है। इस कृति में मन के सारे विकारों का विचारों के द्वारा सुन्दर समाधान किया गया है।

विशिष्ट प्रतिभा के धनी : संजय शाह शास्त्री

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के स्नातक **श्री संजयकुमार शाह** पुत्र श्री बदामीलालजी शाह ने अपनी पढ़ाई के दौरान एक पंक्ति पढ़ी ह्न 'शिक्षा आजीवन प्रक्रिया है।' उक्त पंक्ति को ही ध्येय वाक्य बनाकर आप पर पढ़ाई का ऐसा जुनून सवार हुआ कि आपने एक या दो बार नहीं; बल्कि सात बार विविध विषयों में स्नातकोत्तर की परीक्षायें उत्तीर्ण की। साथ ही बी.एड व एम.एड. के साथ धर्मरत्न व धर्मालंकार की धार्मिक उपाधियाँ भी प्राप्त की।

बांसवाड़ा जिले के गढ़ी तहसील के अन्तर्गत लोहारिया निवासी श्री संजयजी शाह इतनी डिग्रियों के बाद अब पीएच.डी. भी कर रहे हैं।

आपने 1990 में शास्त्री व 1991 में शिक्षा शास्त्री उत्तीर्ण करने के पश्चात् 1992 में राजकीय श्री एकलिंगनाथ वरिष्ठ उपाध्याय संस्कृत विद्यालय गनोड़ा, जिला–बांसवाड़ा (राज.) में संस्कृत व्याख्याता पद पर कार्यभार संभाला। तत्पश्चात् 1993–94 में जैनदर्शनाचार्य, 1996 में एम.एड., 1997–98 में हिन्दी से एम.ए., 1999–2000 में व्याकरणाचार्य, 2001–2002 में अंग्रेजी से एम.ए., 2003–04 में संस्कृत से एम.ए., 2005–06 में साहित्याचार्य किया। इसके मध्य 1999–2000 में आपने अपभ्रंश से डिप्लोमा भी किया।

श्री शाह अपना वक्त पढ़ाई में लगाने के लिये गाँव के बच्चों को सुबह घर पर व शाम को स्कूल में नि:शुल्क पढ़ाते हैं। यही जिज्ञासा आपने अपने बालकों में भी उत्पन्न की। फलस्वरूप आपकी सुपुत्री कुमारी नेहा ने आठवीं बोर्ड में मैरिट प्राप्त की तथा सुपुत्र मनन भी स्कूल में सदैव अव्वल रहता है।

आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी को अपना आदर्श माननेवाले संजय शाह डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल एवं पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल को अपना धर्मगुरु व पण्डित शांतिकुमारजी पाटील को प्रेरक मानते हैं।

अपनी समस्त उपलब्धियों का श्रेय श्री टोडरमल महाविद्यालय से प्राप्त शिक्षा एवं संस्कारों को देते हैं तथा महाविद्यालय में प्रवेश हेतु प्रेरित करनेवाले अपने मामाजी श्री शांतिलालजी भरड़ा का अत्यन्त आभार मानते हैं।

जैनपथप्रदर्शक समिति एवं श्री टोडरमल महाविद्यालय परिवार आपके उज्जवल भविष्य की कामना करता है। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

चुनाव सम्पन्न

मौ (भिण्ड–म.प्र.) : यहाँ विगत माह अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के चुनाव सम्पन्न हुये, जिसकी कार्यकारिणी निम्नानुसार है ह्न

अध्यक्ष–राजेश गयेलिया, उपाध्यक्ष–अनंतकुमार बरोली, सचिव–विकास मोदी, उपसचिव–देवेन्द्र चौधरी, कोषाध्यक्ष–शुद्धात्मप्रकाश शास्त्री, कैप्टन–नवीन सिंघई, उप–कैप्टन–अमित चौधरी, प्रचारमंत्री–पवन शास्त्री, सांस्कृतिक मंत्री–जिनेन्द्र चौधरी व आशीष जमौरिया चुने गये।

शाखा के परम संरक्षक श्री महेश गयेलिया व श्री अशोक सेमरा तथा संरक्षक श्री राकेश जमौरिया व श्री वीरेन्द्र सुहाने है। **– संभव जैन**

आचार्य यतिवृषभ एवं तिलोयपण्णत्ती

वर्तमान चौबीसी के अन्तिम तीर्थनायक भ.महावीरस्वामी के पश्चात् जैनाचार्यों की अविच्छिन्न परम्परा में आगम व्याख्याता यतिवृषभाचार्य का भी वस्तुस्वरूप को निबद्ध करने में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

व्यक्तित्व : यतिवृषभाचार्य अपने युग के यशस्वी आगमज्ञाता विद्वान थे। ये कर्मप्रवाद नामक आठवें अंग के ज्ञाता थे और नन्दिसूत्र के प्रमाण से ये कर्मप्रकृति के भी ज्ञाता थे। आत्मसाधना के साथ श्रुताराधना भी आपमें अक्षुण्ण दिखायी देती है। व्यक्तित्व की महनीयता की दृष्टि से आचार्य यतिवृषभ भूतबलि आचार्य के समकक्ष थे तथा इन दोनों के मतों की मान्यता सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक है। सम्पूर्ण परम्पराओं में प्रचलित उपदेश शैली का ज्ञानकर अपनी सूक्ष्म–प्रतिभा का उपयोग इन्होंने चूर्णिसूत्रों में भी किया है। इनके द्वारा सूत्रशैली को भी प्रतिबिम्बित किया गया है। इसप्रकार इनका व्यक्तित्व सर्वांगीण एवं बहुमुखी प्रतिभावाला है।

गुरु–परम्परा : जयधवल टीका के निर्देशानुसार इन्होंने आर्यमंक्षु एवं नागहस्ती नामक आचार्यों द्वारा सम्यक्रूप से अध्ययनकर कषायपाहुड पर चूर्णिसूत्रों की रचना की, अत: आर्यमंक्षु एवं नागहस्ती इनके गुरु निश्चित रूप से सिद्ध है।

आर्यमंक्षु एवं नागहस्ती आचार्यों को श्वेताम्बर एवं दिगम्बर दोनों परम्परा में समान मान्यता प्राप्त है।

काल–निर्णय : यतिवृषभ आचार्य के सम्बन्ध में विचार करने पर ज्ञात होता है कि षट्खण्डागमकार भूतबलि के समकालीन अथवा उनसे कुछ ही उत्तरवर्ती है। जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष के अनुसार इनका समय ई. 143–173 है। कुछ विद्वान इनका समय पाँचवी शताब्दी के आस–पास का भी मानते हैं।

कर्तृत्व/रचनाएँ : निर्विवादरूप से इनकी दो कृतियाँ मानी जाती हैं। पहली तिलोयपण्णत्ती और दूसरी कषायपाहुड पर रचित चूर्णिसूत्र।

तिलोयपण्णत्ती ह्न इस महान ग्रन्थ में तीन लोक के स्वरूप, आकार, प्रकार, विस्तार, युग परिवर्तन आदि विषयों का निरूपण किया गया है। प्रसंगवश जैन सिद्धान्त, पुराण, लोकोक्तियाँ एवं भारतीय इतिहास संबंधी सामग्री भी निरूपित है। ग्रन्थ के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ग्रन्थ रचना के समय इनके समक्ष षट्खण्डागम, लोक विनिश्चय, लोक विभाग आदि ग्रन्थ विद्यमान थे।

तिलोयपण्णत्ती ग्रन्थ निम्नानुसार नौ महा अधिकारों में विभक्त है ह्न

(1) सामान्य जगत स्वरूप महाधिकार (2) नारक लोक महाधिकार (3) भवनवासलोक महाधिकार (4) मनुष्यलोक महाधिकार (5) तिर्यक्लोक महाधिकार (6) व्यन्तरलोक महाधिकार (7) ज्योतिर्लोक महाधिकार (8) सुरलोक महाधिकार (9) सिद्धलोक महाधिकार।

इसप्रकार भूगोल और खगोल का सर्वांगीण विस्तृत निरूपण करनेवाला यह उत्कृष्ट ग्रन्थ है। एक प्रकार से करणानुयोग का अद्भुत प्रतिपादन करनेवाला यह महान ग्रन्थ अलौकिक है। **ह्न जितेन्द्र वि. राठी**

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 65

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ...)

शुभोपयोगप्रज्ञापन अधिकार के बाद चरणानुयोगसूचक चूलिका में वे अंतिम 5 गाथाएँ हैं; जिन्हें आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने पंचरत्न नाम दिया है। उन्हें ये गाथाएँ इतनी अधिक महत्त्वपूर्ण लगीं कि उन्होंने इन गाथाओं को पंचरत्न की ही संज्ञा दे दी।

वास्तविक बात यह है कि जब ग्रंथ का अंत करने लगते हैं या व्याख्यान का अंत करते हैं तो उपदेश की भाषा में करते हैं, प्रेरणा देते हैं। इसीप्रकार इस ग्रंथ में भी चरणानुयोगसूचक चूलिका में यह बताने के बाद कि 'मुनि किसप्रकार बनना चाहिए तथा मुनि कैसे होने चाहिए ?' आचार्यदेव इन पंचरत्न की पाँच गाथाओं में निष्कर्ष के रूप में यह बता रहे हैं कि कौन भ्रष्ट मुनि हैं तथा कौन सही मुनि हैं ?

न्यायशास्त्र के उद्भट विद्वान आचार्य विद्यानन्दजी ने चार तत्त्वों का वर्णन किया है ह्न संसारतत्त्व, संसारोपायतत्त्व, मोक्षतत्त्व और मोक्षोपायतत्त्व। इन पंचरत्न गाथाओं में भी आचार्यदेव ने यह बताया है कि भ्रष्टमुनि ही संसारतत्त्व हैं तथा सही मुनि ही मोक्षतत्त्व हैं तथा अंतरंग और बहिरंग परिग्रह से रहित ज्ञानी–ध्यानी मुनि ही मोक्षोपायतत्त्व हैं ह्न यही इन पंचरत्न गाथाओं का सार है।

सर्वप्रथम, इन पंचरत्न गाथाओं में संसारतत्त्व को प्रकट करनेवाली 271वीं गाथा इसप्रकार है –

जे अजधागहिदत्था एदे तच्च त्ति णिच्छदा समये।
अच्चंतफलसमिद्धं भमंति ते तो परं कालं।।२७१।।

(हरिगीत)

अयथार्थग्राही तत्त्व के हों भले ही जिनमार्ग में।
कर्मफल से आभरित भवभ्रमे भावीकाल में।।२७१।।

जो भले ही समय में हो (भले ही वे द्रव्यलिंगी के रूप में जिनमत में हों) तथापि वे 'यह तत्त्व हैं (वस्तुस्वरूप ऐसा ही है)' इसप्रकार निश्चयवान वर्तते हुए पदार्थों को अयथार्थरूप से ग्रहण करते हैं (जैसे नहीं है, वैसा समझते हैं), वे अत्यन्तफल समृद्ध (अनन्तकर्मफलों से भरे हुए) ऐसे अबसे आगामी काल में परिभ्रमण करेंगे।

इस गाथा में यह कहा है कि जो तत्त्वों को सहीरूप से नहीं जानते हैं अर्थात् जिन्होंने तत्त्वों को गलतरूप से ग्रहण किया है, जिनमत में रहते हुए भी उन मुनिराजों को अनंत संसाररूप फल मिलेगा तथा वे कितने काल तक संसार में रहेंगे इसका कोई ठिकाना नहीं है अर्थात् वे अनंतकाल तक संसार में रहेंगे।

इसी गाथा की टीका का भाव इसप्रकार है ह्न

''जो स्वयं अविवेक से पदार्थों को अन्यथा ही अंगीकृत करके 'ऐसा ही तत्त्व है' ऐसा निश्चय करते हुए, सतत एकत्रित किये जानेवाले महा मोहमल से मलिन मनवाले होने से नित्य अज्ञानी हैं, वे भले ही समय में अर्थात् द्रव्यलिंगी रूप से जिनमार्ग में स्थित हों; तथापि परमार्थ श्रामण्य को प्राप्त न होने से वास्तव में श्रमणाभास वर्तते हुए अनन्त कर्मफल की उपभोग राशि से भयंकर ऐसे अनन्तकाल तक अनन्त भावान्तररूप परावर्त्तनों से अनवस्थित वृत्तिवाले रहने से, उनको संसार तत्त्व ही जानना।''

टीका में कथित 'समय में स्थित है' का तात्पर्य 'जैनदर्शन में स्थित है' अर्थात् जिन्होंने द्रव्यलिंग धारण कर लिया हो तथा मुनियों के वेश में रहते हो, समाज उन्हें मुनि स्वीकार करती हो। जिसप्रकार अष्टपाहुड़ में चलते–फिरते मुनिराज को साक्षात् जैनदर्शन कहा है; उसीप्रकार यहाँ भ्रष्ट मुनिराजों को संसारतत्त्व कहा है।

तदनन्तर मोक्षतत्त्व को प्रगट करनेवाली 272वीं गाथा इसप्रकार हैह्न

अजधाचारविजुत्तो जद्यत्थपदणिच्छिदो पसंतप्पा।
अफले चिरं ण जीवदि इह सो संपुण्णसामण्णो।।२७२।।

(हरिगीत)

यथार्थग्राही तत्त्व के अर रहित अयथाचार से।
प्रशान्तात्मा श्रमण वे ना भवभ्रमे चिरकाल तक।।२७२।।

जो जीव यथार्थतया पदों का तथा अर्थों (पदार्थों) का निश्चयवाला होने से प्रशान्तात्मा है और अयथाचार (अन्यथा/अयथार्थ आचरण) रहित है; वह संपूर्ण श्रामण्यवाला जीव अफल (कर्मफल रहित हुए) इस संसार में चिरकाल तक नहीं रहता (अल्पकाल में ही मुक्त होता है।)

पूर्व गाथा में भ्रष्ट मुनि को असदाचार से युक्त कहा था तथा इस गाथा में सही मुनिराजों को असदाचार से वियुक्त अर्थात् रहित कहा है।

विगत गाथा में तत्त्वज्ञान से भ्रष्ट मुनियों को संसारतत्त्व कहा था और अब इस गाथा में तत्त्वज्ञ मुनिराजों को मोक्षतत्त्व कहा जा रहा है।

इसी गाथा की टीका का भाव इसप्रकार है ह्न

''जो श्रमण त्रिलोक की चूलिका के समान निर्मल विवेकरूपी दीपिका के प्रकाशवाला होने से यथास्थित पदार्थ निश्चय से उत्सुकता निवर्तन करके स्वरूपमंथर रहने से सतत 'उपशांतात्मा' वर्तता हुआ, स्वरूप में एक में ही अभिमुखरूप से विचरता होने से 'अयथाचार रहित' वर्तता हुआ नित्य ज्ञानी हो; वास्तव में उस सम्पूर्ण श्रामण्यवाले साक्षात् श्रमण को मोक्षतत्त्व जानना; क्योंकि पहले के सकल कर्मों के फल उसने लीलामात्र से नष्ट कर दिये हैं; इसलिए और वह नूतन कर्मफलों को उत्पन्न नहीं करता; इसलिए पुन: प्राण–धारणरूप दीनता को प्राप्त न होता हुआ द्वितीय भावरूप परावर्तन के अभाव के कारण शुद्धस्वभाव में अवस्थित वृत्तिवाला रहता है।''

तदनन्तर मोक्षतत्त्व का साधनतत्त्व प्रकट करनेवाली 273वीं गाथा इसप्रकार है ह्न

सम्मं विदिदपदत्था चत्ता उवहिं बहित्थमज्झत्थं।
विसयेसु णावसत्ता जे ते सुद्धा त्ति णिद्दिट्ठा।।२७३।।

(हरिगीत)

यथार्थ जाने अर्थ दो विध परिग्रह को छोड़कर।
ना विषय में आसक्त वे ही श्रमण शुद्ध कहे गये।।२७३।।

सम्यक् (यथार्थतया) पदार्थों को जानते हुए जो बहिरंग तथा अंतरंग परिग्रह को छोड़कर विषयों में आसक्त नहीं हैं, वे 'शुद्ध' कहे गये हैं।

इसी गाथा की टीका का भाव इसप्रकार है ह्न

''अनेकान्त के द्वारा ज्ञात सकल ज्ञातृतत्त्व और ज्ञेयतत्त्व के यथास्थित स्वरूप में जो प्रवीण हैं, अन्तरंग में चकचकित होते हुए अनन्तशक्तिवाले चैतन्य से भास्वर (तेजस्वी) आत्मतत्त्व के स्वरूप को जिनने समस्त बहिरंग तथा अंतरंग संगति के परित्याग से विविक्त (भिन्न) किया है और अन्त:तत्त्व की वृत्ति (आत्मा की परिणति) स्वरूप गुप्त तथा सुषुप्त (जैसे कि सो गया हो) समान (प्रशांत) रहने से जो विषयों में किंचित् भी आसक्ति को प्राप्त नहीं होते, ऐसे जो सकल महिमावान् भगवन्त 'शुद्ध' (शुद्धोपयोगी) हैं; उन्हें ही मोक्षतत्त्व का साधनतत्त्व जानना। (अर्थात् वे शुद्धोपयोगी मोक्षमार्गरूप हैं) क्योंकि वे अनादि संसार से रचित – बन्द रहे हुए विकट कर्मकपाट को तोड़ने–खोलने के अति उग्र प्रयत्न से पराक्रम प्रगट कर रहे हैं।''

टीका में 'ज्ञात सकल ज्ञातृतत्त्व और ज्ञेयतत्त्व' कहकर आचार्यदेव ने समग्ररूप से प्रवचनसार को याद किया है। वे यहाँ यह कहना चाहते हैं कि ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन अधिकार से **सर्वज्ञता** का तथा ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन अधिकार से **'उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्', गुणपर्यवद् द्रव्यम्, स्वरूपास्तित्त्व** व **सादृश्यास्तित्त्व** का स्वरूप समझ लेना चाहिए।

तदनन्तर टीका में शुद्धोपयोगी को मोक्षमार्गरूप कहा है। शुद्धोपयोग भावरूप है; अत: वह मोक्षमार्ग है; किन्तु शुद्धोपयोगी मुनिराज साक्षात् मोक्षस्वरूप है। जिसप्रकार क्रोध तो भाव है; लेकिन कोई व्यक्ति यदि क्रोध से लाल–पीला हो रहा हो, तो उन्हें देखकर यह कहा जाता है कि यदि क्रोध के दर्शन करना हो तो इनके दर्शन कर लो। उसीप्रकार शुद्धोपयोग तो भाव है; लेकिन यदि कोई साक्षात् मोक्षमार्ग देखना चाहता हो तो यह कह दिया जाता है कि इन शुद्धोपयोगी मुनिराज के दर्शन कर लो। इसप्रकार मुनिराज साक्षात् मोक्षमार्ग के पिण्ड हैं।

यहाँ मुनिराज को साक्षात् मोक्षमार्ग का पिण्ड कहा है। यह मुनियों के आचरण का प्रकरण होने से सही मुनियों की महिमा बताने के लिए उन्हें मोक्षतत्त्व कहा, मोक्ष का साधन तत्त्व कहा तथा जो इन शुद्धोपयोगी मुनियों की शरण में जावेगा उसके अनंत संसार का नाश हो जाएगा तथा अल्पकाल में ही मोक्ष चला जाएगा और गलत मुनियों की महिमा हमारे चित्त में से निकालने के लिए उन्हें संसारतत्त्व कहा तथा जो इन भ्रष्ट मुनियों का सेवन करेगा वह अनंतकाल तक संसार में भटकेगा।

चक्रवर्ती भी शुद्धोपयोगी मुनियों के पास घण्टों बैठकर चले जाए तो भी मुँह से आशीर्वाद के शब्द भी नहीं निकलें; क्योंकि वे शुद्धोपयोगी मुनिराज तो अपने में मग्न हैं, उन्हें जगत से कुछ लेना–देना नहीं है, उन्हें लोक का संग्रह करना ही नहीं है। अतएव शुद्धोपयोगी मुनियों को साक्षात् मोक्षतत्त्व कहा तथा भ्रष्ट मुनियों को संसारतत्त्व कहा।

इसी संदर्भ में, मोक्षतत्त्व के साधनतत्त्व का (अर्थात् शुद्धोपयोगी का) सर्वमनोरथों के स्थान के रूप में अभिनन्दन (प्रशंसा) करनेवाली पंचरत्न की चौथी गाथा की टीका भी दृष्टव्य है ह्न

''प्रथम तो, सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र के युगपद्पनेरूप से प्रवर्तमान एकाग्रता जिसका लक्षण है – ऐसा जो साक्षात् मोक्षमार्गभूत श्रामण्य, 'शुद्ध' के ही होता है; समस्त भूत–वर्तमान–भावी व्यतिरेकों के साथ मिलित (मिश्रित), अनन्त वस्तुओं का अन्वयात्मक जो विश्व उसके (१) सामान्य और (२) विशेष के प्रत्यक्ष प्रतिभास स्वरूप जो (१) दर्शन और (२) ज्ञान वे 'शुद्ध' के ही होते हैं; निर्विघ्न खिले हुए सहज ज्ञानानन्द की मुद्रावाला (स्वाभाविक ज्ञान और आनन्द की छापवाला) दिव्य जिसका स्वभाव है ऐसा जो निर्वाण, वह 'शुद्ध' के ही होता है; और टंकोत्कीर्ण परमानन्द अवस्थारूप से सुस्थित आत्मस्वभाव की उपलब्धि से गंभीर ऐसे जो भगवान सिद्ध, वे 'शुद्ध' ही होते हैं (अर्थात् शुद्धोपयोगी ही सिद्ध होते हैं), वचनविस्तार से बस हो! सर्वमनोरथों के स्थानभूत, मोक्षतत्त्व के साधनतत्त्वरूप, 'शुद्ध' को, जिसमें परस्पर अंगअंगीरूप से परिणमित भावक–भाव्य के कारण स्व–पर का विभाग अस्त हुआ है ह्न ऐसा भावनमस्कार हो।''

टीका में पहली बात तो यह बताई है कि भूत, भविष्यत् और वर्तमान – ये ऊर्ध्वतासामान्य है और इनका स्वभाव व्यतिरेकी है। यहाँ 'व्यतिरेकी' का तात्पर्य यह है कि एक में दूसरे का नहीं होना अर्थात् भूत की पर्याय में वर्तमान की पर्याय नहीं है तथा वर्तमान की पर्याय में भविष्य की पर्याय नहीं है। इसप्रकार इन भूत–भविष्य–वर्तमान की पर्यायों का व्यतिरेकी स्वभाव है तथा गुणों और प्रदेशों का अन्वयी स्वभाव है अर्थात् गुण व पर्याय एकसाथ रह सकते हैं, जैसे :– ज्ञान भी आत्मा के असंख्य प्रदेशों में है तथा सुख भी आत्मा के अनंत प्रदेशों में है। इसप्रकार भगवान आत्मा तिर्यक् सामान्य और ऊर्ध्वता सामान्य का पिण्ड है अर्थात् भगवान आत्मा अन्वयों से भी सहित है और व्यतिरेकों से भी सहित है।

तदनन्तर टीका में अन्वय–व्यतिरेकीरूप तथा गुणपर्याययुक्त भगवान आत्मा को सामान्य और विशेष के प्रत्यक्षप्रतिभासस्वरूप कहा है। 'सामान्य' का अर्थ दर्शन और 'विशेष' का अर्थ ज्ञान है। इसप्रकार शुद्ध भगवान आत्मा के आश्रय से ही पर्याय में शुद्धता की प्राप्ति होती है, इसलिए वह भगवान आत्मा शुद्ध का साधन भी है और शुद्ध भी है।

इसके बाद टीका में यह कहा है कि सभी मनोरथों की पूर्ति आत्मा के आश्रय से ही होगी तथा मोक्षतत्त्व का साधनभूत भी वही शुद्ध आत्मा है, जिसमें परस्पर अंगअंगीरूप से परिणमित भावक–भाव्यता के कारण स्व–पर का विभाग अस्त हुआ है।

आचार्यदेव ने जो अंत में नमस्कार करने की बात कही है; उस संदर्भ में मैं यह कहना चाहता हूँ कि नमस्कार किसको किया जाय और कौन करे? क्योंकि नमस्कार करनेवाला तथा जिसको नमस्कार किया जाय – ये दोनों एक ही हैं। मेरे कहने का मतलब यह है कि द्रव्यनमस्कार की क्या कीमत है ? मैं मेरे को ही नमस्कार करूँ; क्योंकि यदि दूसरों को नमस्कार करता हूँ तो दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करना पड़ता है; लेकिन अपने को नमस्कार करने के लिए हाथ जोड़ने की जरूरत नहीं है। इसलिए आचार्यदेव ने अपने को नमस्कार करने के लिए कहा है। अपने प्रति जो अपनापन है; वही नमस्कार है; अपनी महिमा के प्रति समर्पण ही नमस्कार है; अपने प्रति अपना जीवन लगा देना ही सबसे बड़ा नमस्कार है। आचार्यदेव ने यहाँ जिस नमस्कार की बात कही है; उसका अर्थ यही है कि अपने उपयोग को सारे जगत से हटाकर 'शुद्ध' पर लगाना। **(क्रमश:)**

17 दिसम्बर 2006, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

बाँसवाड़ा में हुआ विद्वत् सम्मेलन

श्री अखिल भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् का राष्ट्रीय सम्मेलन बाँसवाड़ा में पंचकल्याणक के मध्य **दिनांक 4 दिसम्बर,06** को आयोजित किया गया। समारोह की अध्यक्षता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने की।

इस अवसर पर डॉ. राजेन्द्रकुमारजी बंसल अमलाई, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, पण्डित उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने अपने विचार व्यक्त किये।

इस अवसर पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, डॉ. बी.एल.सेठी झुंझुनू, विदुषी श्रीमती विद्यावती जैन गनोड़ा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा आदि अनेक विद्वत्गण मंचासीन थे।

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में समस्त विद्वानों को सामाजिक एकता-अखण्डता को कायम रखते हुये भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित वीतरागी तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार करने हेतु उचित मार्गदर्शन दिया।

मंगलाचरण पण्डित संजीवकुमार गोधा ने किया। कार्यक्रम का सफल संचालन विद्वत्परिषद के प्रचार-मंत्री श्री अखिल बंसल द्वारा किया गया।

प्रवेश फार्म शीघ्र भेजें

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) की शीतकालीन परीक्षायें 12, 13 और 15 जनवरी 2007 को होने जा रही है। जिन परीक्षा केन्द्रों ने अभी तक छात्र-प्रवेश फार्म भरकर जयपुर कार्यालय नहीं भेजे हैं, वे शीघ्रातिशीघ्र प्रवेश फार्म भेजें। ताकि उन्हें आवश्यक सामग्री भेजी जा सके। कदाचित खाली फार्म प्राप्त नहीं हुये हों तो पत्र अथवा फोन से सूचित करें। **ह्न प्रबन्धक, ओ.पी. आचार्य-09414079135**

वेदी शिलान्यास सम्पन्न

शिवपुरी (म.प्र.) : यहाँ छत्री रोड स्थित निर्माणाधीन श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में सकल दिगम्बर जैन समाज शिवपुरी की ओर से दिनांक 6 दिसम्बर, 2006 को हर्षोल्लास पूर्वक वेदी शिलान्यास का आयोजन किया गया।

शिवपुरी स्थित सभी जैन मंदिरों के अध्यक्ष एवं 1000-1200 लोगों की उपस्थिति में **पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर** के प्रासंगिक प्रवचन ने उपस्थित जन समुदाय को मंत्र-मुग्ध कर दिया। प्रवचनोपरान्त आपही के करकमलों से **पण्डित लालजीरामजी विदिशा** के प्रतिष्ठाचार्यत्व में शुद्ध तेरापंथ आम्नायानुसार वेदी शिलान्यास की मांगलिक विधी सम्पन्न की गई।

कार्यक्रम का शुभारंभ श्री सुरेशचन्दजी जैन के घर से निकाली गई मंगलकलश शोभायात्रा से हुआ। ध्वजारोहण श्री विमलकुमारजी पत्तेवालों द्वारा किया गया।

इस अवसर पर ग्वालियर, शिवपुरी, बदरवास, कोलारस, पौहरी, करैरा, गुना, खतौली आदि स्थानों से मुमुक्षु भाई-बहिन उपस्थित थे।

6 दिसम्बर को प्रात: एवं रात्रि में श्री दिगम्बर जैन छत्री मंदिर एवं श्री महावीर जिनालय में भी पण्डित लालजीरामजी विदिशा एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के प्रवचन हुये।

7 दिसम्बर को मुमुक्षु मण्डल कोलारस के विशेष आग्रह पर गोधाजी का एक प्रवचन पंचायती बड़ा मंदिर कोलारस में भी हुआ।

सम्पूर्ण आयोजन श्री सुरेशचन्दजी जैन परिवार शिवपुरी के अथक् प्रयासों से सफल हुआ। **- अरुणकुमार जैन**

आगामी ...

चन्देरी में छहढ़ाला शिविर

चन्देरी (म.प्र.) : यहाँ पण्डित चुन्नीलालजी शास्त्री की पुण्यस्मृति में दिनांक 19 से 25 जनवरी 07 तक श्रीमती हीराबाई चुन्नीलाल जैन पारमार्थिक ट्रस्ट के सौजन्य से श्री अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद् के तत्त्वावधान में छहढ़ाला शिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है। शिविर में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के पावन सानिध्य के अतिरिक्त स्वस्ति श्री भट्टारक चारूकीर्तिजी मूडबिद्री, पं. रतनचन्दजी भारिल्ल, पं. शान्तिकुमारजी पाटील, डॉ. राजेन्द्रजी बंसल, डॉ. सत्यप्रकाशजी जैन आदि विद्वान पधारेंगे। इस अवसर पर संगोष्ठी एवं भक्ति संध्या के विशेष आयोजन भी सम्पन्न होंगे।

ज्ञातव्य है कि इस अवसर पर अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद् द्वारा प्रायोजित पं. गोपालदास बरैया पुरस्कार संस्था के मंत्री डॉ. राजेन्द्रकुमार बंसल, अमलाई वालों को दिया जायेगा। सामारोह की अध्यक्षता विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल होंगे। **ह्न अखिल बंसल**

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

24 दिस. से 28 दिसम्बर	**देवलाली**	**विधान एवं शिविर**
23 से 25 जनवरी, 07	**चन्देरी**	**छहढाला शिविर**
25 से 31 जनवरी, 07	**बीना**	**पंचकल्याणक**
02 से 06 फरवरी, 07	**मंगलायतन**	**वार्षिकोत्सव**
15 से 21 फरवरी, 07	**अलवर**	**पंचकल्याणक**

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,**डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन; इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
फैक्स : (0141) 2704127